बृहद् आलोयणा

प्रकाशक :

सम्यक्ज्ञान प्रचारक मण्डल

बृहद् आलोयणा

:: प्रकाशक ::

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

पुस्तक : **बृहद् आलोयणा**

प्रकाशक :

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.)
फोन : 0141-2575997, 2571163
फैक्स : 0141-2570753
Email : sgpmandal@yahoo.in

द्वितीय संस्करण : 2011
तृतीय संस्करण : 2012
चतुर्थ संस्करण : 2014

मुद्रित प्रतियाँ : 500

मूल्य : **5.00/-** (पाँच रुपये मात्र)

कम्प्यूटर टाइपसेटिंग :
प्रहलाद नारायण लखेरा
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

मुद्रक :

अन्य प्राप्ति स्थल :

- **श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ**
  घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राजस्थान)
  फोन : 0291-2624891
  मोबाइल : 094141267824

- **Shri Navratan ji Bhansali**
  C/o. Mahesh Electricals,
  14/5, B.V.K. Ayangar Road,
  BANGALORE-560053
  (Karnataka)
  Ph. : 080-22265957
  Mob. : 09844158943

- **Shri B. Budhmal ji Bohra**
  C/o. Bohra Syndicate,
  53, Erullapan Street,
  Sowcarpet, **CHENNAI-79**
  (Tamilnadu)
  Ph. : 044-26425093
  Mob. : 09444235065

- **श्रीमती विजयानन्दिनी जी मल्हारा**
  ''रत्नसागर'', कलेक्टर बंगला रोड़, चर्च के सामने, 491-ए, प्लॉट नं. 4, **जलगाँव-425001** (महा.)
  फोन : 0257-2223223

- **श्री दिनेश जी जैन**
  1296, कटरा धुलिया, चाँदनी चौक, दिल्ली-110006
  फोन : 011-23919370
  मो. 09953723403

प्रकाशकीय

आलोचना का जीवन में अत्यधिक महत्त्व है। श्रावकगण प्रतिदिन या पन्द्रह दिनों में स्वकृत पापों की आलोचना करते हैं तथा अपने द्वारा इन दिनों में हुई गलतियों को देखने का तथा पुनरावर्तन न हो ऐसा प्रयास करते हैं। जो कोई श्रावक 15 दिनों के अन्तराल में भी आलोचना नहीं कर पाते वे चातुर्मास के प्रारम्भ में, चातुर्मास के समापन में या फाल्गुनी चातुर्मास में आलोचना करते हैं। यदि चातुर्मासिक दिवस पर भी आलोचना नहीं कर पायें तो संवत्सरी महापर्व के दिन तो स्वकृत पापों की आलोचना श्रावक द्वारा अवश्य की जानी चाहिए।

स्वकृत पापों की आलोचना हेतु प्रस्तुत पुस्तक 'बृहद् आलोयणा' के वाचन का अत्यधिक महत्त्व है। आलोचना हेतु पुस्तक के प्रेरणादायी, सरस व नीतिकार दोहे बड़े ही उपयोगी प्रतीत होते हैं तथा पापों से स्वयं को हटाने के लिए श्रावक द्वारा ''मिच्छामि दुक्कडं'' भी दिया जाता है। आलोचना का फल उत्तराध्ययन के 29वें सूत्र में भी निम्नानुसार दृष्टिगोचर होता है-

प्रश्न-आलोयणाए णं भंते! जीवे किं जणयइ?

उत्तर-आलोयणाए णं माया-नियाण-मिच्छादंसण-सल्लाणं-मोक्खमग्ग-विग्घाणं अणंत-संसार-वद्धणाणं उद्धरणं करेइ। उज्जुभावं च जणयइ। उज्जुभाव-पडिवन्ने य णं जीवे अमाई इत्थीवेय-नपुंसगवेयं च न बंधइ। पुव्वबद्धं च णं निज्जरेइ।

अर्थात्-प्रश्न-हे भन्ते! आलोचना से जीव को क्या प्राप्त होता है?

उत्तर-आलोचना से मोक्ष मार्ग में विघ्न डालने वाले और अनन्त संसार को बढ़ाने वाले माया, निदान और मिथ्या दर्शन रूप शल्यों को निकाल फेंकता है और ऋजुभाव (सरलता) को प्राप्त होता है और सरलता को प्राप्त जीव माया रहित होता है। अत: वह स्त्रीवेद व नपुंसकवेद का बन्ध नहीं करता है और यदि पूर्व का बंध हो तो उसकी निर्जरा करता है।

प्रस्तुत पुस्तक के प्रूफ संशोधन कार्य में श्रीमान् धर्मचन्द जी जैन (रजिस्ट्रार), जोधपुर, श्रीमान् सौभागमल जी सा. जैन, अलीगढ़ एवं श्रीमान् त्रिलोकचन्द जी जैन तथा श्री जिनेन्द्र कुमार जी जैन का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ। पुस्तक की टाइपसेटिंग मण्डल कार्यालय में कार्यरत श्री प्रहलाद नारायण जी लखेरा ने व आवरण, साज-सज्जा श्री अनिल कुमार जी जैन ने की है। अत: मण्डल कार्यालय इन सभी के प्रति अपना आभार प्रकट करता है।

सभी सहृदय मुमुक्षु पाठकगण सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के इस प्रकाशन से निश्चय ही लाभान्वित होंगे, तथा अपना जीवन उन्नत व परिष्कृत करेंगे, ऐसी प्रबल आशा व मंगल कामना के साथ।

:: निवेदक ::

कैलाशमल दुगड़	सम्पतराज चौधरी	विनयचन्द डागा
अध्यक्ष	कार्याध्यक्ष	मन्त्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

बृहद् आलोयणा

(सुश्रावक लाला श्री रणजीतसिंह जी कृत)

!! दोहा !!

{ 1 }

१. सिद्ध श्री परमात्मा, अरिगंजन अरिहंत।
इष्टदेव वंदूँ सदा, भयभंजन भगवंत।।

२. अरिहंत सिद्ध समरूँ सदा, आचारज उवज्झाय।
साधु सकल के चरण कूँ, वंदूँ शीश नमाय।।

३. शासन नायक सुमरिये, भगवंत वीर जिनन्द।
अलिय विघन दूरा हरे, आपे परमानन्द।।

४. अँगूठे अमृत बसे, लब्धि तणा भंडार।
श्री गुरु गौतम सुमरिये, वांछित फल दातार।।

५. श्री गुरुदेव प्रसाद से, होत मनोरथ सिद्ध।
ज्यों जल बरसत वेलि तरु, फूल फलन की वृद्ध।।

६. पंच परमेष्ठि देव को, भजनपूर पहिचान।
कर्म अरि भाजे सभी, होवे परम कल्याण।।

७. श्री जिनयुगपद कमल में, मुझ मन भ्रमर बसाय।
कब ऊगे वो दिन करूँ, श्रीमुख दर्शन पाय।।

८. प्रणमी पदपंकज भणी, अरिगंजन अरिहंत।
कथन करूँ अब जीव को, किंचित् मुझ विरतंत।।

९. आरंभ विषय कषाय वश, भमियो काल अनंत।
लख चौरासी योनि से, अब तारो भगवंत।।

१०. देव गुरु धर्म सूत्र में, नव तत्त्वादिक जोय।
अधिका ओछा जे कह्या, मिच्छा दुक्कडं मोय।।

११. मोह अज्ञान मिथ्यात्व को, भरियो रोग अथाग।
वैद्यराज गुरु शरण से, औषध ज्ञान वैराग।।

१२. जे मैं जीव विराधिया, सेव्या पाप अठार।
प्रभो ! तुमारी साख से, बारंबार धिक्कार।।

१३. बुरा बुरा सब को कहूँ, बुरा न दीसे कोय।
जो घट शोधूँ आपणो, तो मोसूँ[१] बुरा न कोय।।

१४. कहवा में आवे नहीं, अवगुण भर्‍या अनंत।
लिखवा में क्यों कर लिखूँ, जाणो श्री भगवंत।।

१५. करुणानिधि करुणा करी, कठिन कर्म मोय छेद।
मोह अज्ञान मिथ्यात्व को, करजो ग्रंथि भेद[२]।।

१६. पतित उधारण नाथजी, अपनो विरुद विचार।
भूल चूक सब माहरी, खमिये बारंबार।।

१७. माफ करो सब माहरा, आज तलक ना दोष।
दीन दयाल देवो मुझे, श्रद्धा शील सन्तोष।।

१८. आत्म निंदा शुद्ध भणी, गुणवंत वंदन भाव।
रागद्वेष पतला करी, सब से खमत खमाव।।

१. मेरे से, २. कर्मों की गाँठ को तोड़ना।

१९. छूटूँ पिछला पाप से, नवा न बाँधू कोय।
श्री गुरुदेव प्रसाद से, सफल मनोरथ होय।।

२०. परिग्रह ममता तजि करी, पंच महाव्रत धार।
अंत समय आलोयणा, करूँ संथारो सार।।

२१. तीन मनोरथ[१] ए कह्या, जो ध्यावे[२] नित्य मन्न।
शक्ति सार वरते सही, पावे शिवसुख धन्न।।

२२. अरिहंत देव निर्ग्रन्थ गुरु, संवर निर्जरा धर्म।
केवलिभाषित शासतर, यही जैनमत मर्म।।

२३. आरंभ विषय कषाय तज, शुद्ध समकित व्रत धार।
जिन आज्ञा परमाण कर, निश्चय खेवो पार।।

२४. खिण[३] निकम्मो रहणो नहीं, करणो आतम काम।
भणणो गुणणो सीखणो, रमणो ज्ञान आराम[४]।।

२५. अरिहंत सिद्ध सब साधुजी, जिन आज्ञा धर्मसार।
मांगलिक उत्तम सदा, निश्चय शरणा चार।।

२६. घड़ी घड़ी पल पल सदा, प्रभु सुमिरण को चाव।
नरभव सफलो जो करे, दान शील तप भाव।।

---

१. मन की अभिलाष, २. चिन्तन करना,
३. थोड़ी देर भी, ४. बगीचा।

{ 2 }

१. सिद्धाँ जैसो जीव है, जीव सो ही सिद्ध होय।
कर्म मैल को आँतरो, बूझै[१] विरला कोय।।

२. कर्म पुद्गल रूप है, जीव रूप है ज्ञान।
दो मिल कर बहुरूप है, बिछड़्याँ[२] पद निरवाण।।

३. जीव करम भिन्न भिन्न करो, मनुष्य जनम को पाय।
ज्ञानातम वैराग्य से, धीरज ध्यान लगाय।।

४. द्रव्य थकी जीव एक है, क्षेत्र असंख्य प्रमाण।
काल थकी सर्वदा रहे, भावे दर्शन ज्ञान।।

५. गर्भित[३] पुद्गल पिंड में, अलख[४] अमूरति[५] देव।
फिरे सहज भव चक्र में, यह अनादि की टेव[६]।।

६. फूल अतर घी दूध में, तिल में तेल छिपाय।
यूँ चेतन जड़ करम संग, बँध्यो ममत दुःख पाय।।

७. जो जो पुद्गल की दशा, ते निज माने हंस[७]।
या ही भरम विभाव ते, बढ़े करम को वंश।।

८. रतन बँध्यो गठड़ी विषे, सूर्य छिप्यो घन माँय।
सिंह पिंजरा में दियो, जोर चले कछु नाँय।।

९. ज्यों बन्दर मदिरा पीयाँ, बिच्छू डंकित गात।
भूत लग्यो कौतुक करे, त्यों कर्मों का उत्पात।।

१०. कर्म संग जीव मूढ़ है, पावे नाना रूप।
कर्मरूप मल के टले, चेतन सिद्ध सरूप।।

---

१. समझे, २. अलग होना, ३. मिला हुआ, ४. दिखाई न देने वाला, ५. आकार रहित, ६. आदत, ७. आत्मा।

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 2 }

११. शुद्ध चेतन उज्ज्वल दरब, रह्यो कर्म मल छाय।
तप संयम से धोवताँ, ज्ञान ज्योति बढ़ जाय।।

१२. ज्ञान थकी जाने सकल, दर्शन श्रद्धा रूप।
चारित्र से आवत रुके, तपस्या क्षपण सरूप।।

१३. कर्म रूप मल[१] के शुधे, चेतन चाँदी रूप।
निर्मल ज्योति प्रगट भयाँ, केवल ज्ञान अनूप[२]।।

१४. मूसी पावक सोहिगी, फूकाँ तणो उपाय।
राम चरण चारुँ मिल्याँ, मैल कनक[३] को जाय।।

१५. कर्मरूप बादल मिटे, प्रगटे चेतन चन्द।
ज्ञानरूप गुण चाँदनी, निर्मल ज्योति अमन्द[४]।।

१६. राग द्वेष दो बीज से, कर्म बन्ध की व्याधि[५]।
ज्ञानातम वैराग्य से, पावे मुक्ति समाधि।।

१७. अवसर बीत्यो जात है, अपने वश कछु होत।
पुण्य छत्ताँ पुण्य होत है, दीपक दीपक ज्योत।।

१८. कल्प वृक्ष चिन्तामणि, इस भव में सुखकार।
ज्ञान वृद्धि इन से अधिक, भव दुःख भंजनहार।।

१९. राई मात्र घट वध नहीं, देख्या केवल ज्ञान।
यह निश्चय कर जान के, तजिये प्रथम[६] ध्यान।।

२०. दूजा[७] कभी न चिंतिये, कर्मबन्ध बहु दोष।
तीजा[८] चौथा[९] ध्याय के, करिये मन सन्तोष।।

---

१. मैल, २. उपमा रहित, ३. सोना, ४. उत्कृष्ट, ५. पीड़ा, ६. आर्त्तध्यान, ७. रौद्रध्यान, ८. धर्म ध्यान, ९. शुक्ल ध्यान।

२१. गई वस्तु सोचे नहीं, आगम वांछा नाँय।
वर्तमान वर्ते सदा, सो ज्ञानी जग माँय।।

२२. अहो समदृष्टि जीवड़ा, करे कुटुम्ब प्रतिपाल।
अन्तर्गत न्यारो रहे, ज्यों धाय खिलावे बाल।।

२३. सुख दुःख दोनुँ बसत है, ज्ञानी के घट माँय।
गिरि[१] सर[२] दीसे मुकुर[३] में, भार भींजवो नाँय।।

२४. जो जो पुद्‌गल फरसना, निश्चय फरसे सोय।
ममता समता भाव से, करमबन्ध खय होय।।

२५. बाँध्या सोही भोगवे, कर्म शुभाशुभ भाव।
फल निर्जरा होत है, यह समाधि चित चाव।।

२६. बाँध्या बिन भुगते नहीं, बिन भुगत्याँ न छुड़ाय।
आप ही करता भोगता, आप ही दूर कराय।।

२७. पथ[४] कुपथ[५] घट वध करी, रोग हानि वृद्धि थाय।
यूँ पुण्य पाप किरिया करी, सुख दुःख जग में पाय।।

२८. सुख दियाँ सुख होत है, दुःख दियाँ दुःख होय।
आप हणे नहीं अवर कूँ, तो आपकूँ हणे न कोय।।

२९. ज्ञान गरीबी गुरु वचन, नरम वचन निर्दोष।
इनकूँ कभी न छोड़िये, श्रद्धा शील सन्तोष।।

३०. सत मत छोड़ो हो नराँ, लक्ष्मी चौगुनी होय।
सुख दुःख रेखा कर्म की, टाली टले न कोय।।

---

१. पर्वत, २. तालाब, ३. दर्पण, ४. पथ्य-गुणकारी, ५. कुपथ्य-अवगुण करने वाला।

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 3 }

३१. गोधन, गजधन, रतनधन, कंचन खान सुखान।
जब आवे सन्तोष धन, सब धन धूल समान।।
३२. शील रतन मोटो रतन, सब रत्नाँ की खान।
तीन लोक की सम्पदा, रही शील में आन।।
३३. शीले सर्प न आभड़े[1], शीले शीतल आग।
शीले अरि करि[2] केसरी[3], भय जावे सब भाग।।
३४. शील रतन के पारखी, मीठा बोले बैन।
सब जग से ऊँचा रहे, जो नीचा राखे नैन।।
३५. तन कर मन कर वचन कर, देत न काहु दु:ख।
कर्म रोग पातक झड़े, देखत वाँ का मुख।।
३६. पान खिरन्तो इम कहे, सुन तरुवर वनराय।
अब के बिछुड़े कब मिलें, दूर पड़ेंगे जाय।।
३७. तब तरुवर उत्तर दियो, सुनो पत्र इक बात।
इस घर एही रीत है, इक आवत इक जात।।
३८. बरस दिनों की गाँठ को, उच्छव गाय बजाय।
मूरख नर समझे नहीं, वरस गाँठ को जाय।।

सोरठा

पवन तणो विश्वास, किण कारण ते दृढ़ कियो।
इनकी एही रीत, आवे के आवे नहीं।।

१. डसे, २. हाथी, ३. सिंह।

!! दोहा !!

१. करज विराणा काढ़ के, खरच किया बहु दाम।
जब मुद्दत पूरी हुवे, देणा पड़सी दाम।।
२. बिना दियाँ छूटे नहीं, यह निश्चय कर मान।
हँस हँस के क्यों खरचिये, दाम बिराना जान।।
३. जीव हिंसा करताँ थकाँ, लागे मिष्ट अज्ञान।
ज्ञानी इम जाने सही, विष मिलियो पकवान।।
४. काम भोग प्यारा लगे, फल किंपाक समान।
मीठी खाज खुजावताँ, पीछे दु:ख की खान।।
५. जप तप संजम दोहिलो, औषध कड़वी जाण।
सुख कारण पीछे घणो, निश्चय पद निरवाण।।
६. डाभ अणी[1] जल बिंदुवो, सुख विषयन को चाव।
भवसागर दु:ख जल भर्‌यो, यह संसार स्वभाव।।
७. चढ़ उत्तुंग[2] जहाँ से पतन, शिखर नहीं वो कूप[3]।
जिस सुख अंदर दु:ख बसे, वो सुख भी दु:ख रूप।।
८. जब लग जिसके पुण्य का, पहुँचे नहीं करार।
तब लग उसकूँ माफ है, अवगुण करे हजार।।
९. पुण्य क्षीण जब होत है, उदय होत है पाप।
दाझे[4] वन की लाकड़ी, प्रजले आपों आप।।

१. कुश के अग्र भाग पर, २. ऊँचा, ३. कुआ, ४. जलना।

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 4 }

१०. पाप छिपायाँ ना छिपे, छिपे तो मोटा भाग।
दाबी दूबी ना रहे, रूई लपेटी आग।।

११. बहु बीती थोड़ी रही, अब तो तुरत संभार।
पर भव निश्चय जावणो, वृथा जन्म मत हार।।

१२. चार कोश ग्रामान्तरे, खरची बाँधे लार।
परभव निश्चय जावणो, करिये धर्म विचार।।

१३. रज विरज ऊँची गई, नरमाई के पाण।
पत्थर ठोकर खात है, करड़ाई के ताण।।

१४. अवगुण उर धरिये नहीं, जो हुवे बिरख[1] बबूल।
गुण लीजे 'कालू' कहे, नहीं छाया में शूल।।

१५. जैसी जापे वस्तु है, वैसी दे दिखलाय।
वाँका बुरा न मानिये, वो लेन कहाँ से जाय।।

१६. गुरु कारीगर सारिखा, टाँची वचन विचार।
पत्थर से प्रतिमा करे, पूजा लहे अपार।।

१७. सन्तन की सेवा कियाँ, प्रभु रींझत[2] है आप।
जाँ का बाल खिलाइये, ताँ का रींझत बाप।।

१८. भवसागर संसार में, दीपा श्री जिनराज।
उद्यम करी पहुँचे तिरे, बैठ धर्म की जहाज।।

१९. निज आतम कूँ दमन कर, पर आतम कूँ चीन[3]।
परमातम को भजन कर, सोई मत परवीन।।

---
१. वृक्ष, २. खुश होना, ३. पहिचान।

२०. समझूँ शंके पाप से, अणसमझूँ हरषंत।
वे लूखा वे चीकणा, इण विध कर्म बधंत।।

२१. समझ सार संसार में, समझूँ टाले दोष।
समझ समझ कर जीव ही, गया अनन्ता मोक्ष।।

२२. उपशम विषय कषाय नो, संवर तीनूँ योग।
किरिया जतन विवेक से, मिटे कर्म दु:ख रोग।।

२३. रोग मिटे समता वधे, समकित व्रत आराध।
निवैरी सब जीव का, पावे मुक्ति समाध।।

।। इति भूल चूक मिच्छामि दुक्कडं ।।

१. सिद्ध श्री परमात्मा अरिगंजन अरिहंत।
इष्टदेव वन्दूँ सदा, भयभंजन भगवन्त।।

२. अनन्त चौबीसी जिन नमूँ, सिद्ध अनन्ता क्रोड़।
वर्तमान जिनवर सभी, केवली दो नव क्रोड़।।

३. गणधरादिक सर्व साधुजी, समकित व्रत गुणधार।
यथायोग्य वन्दन करूँ, जिन आज्ञा अनुसार।।

(यहाँ पर एक नवकार मन्त्र का स्मरण करना चाहिए।)

४. पंच परमेष्ठि देव को, भजन पूर पहिचान।
कर्म अरि भाजे सभी, शिवसुख मंगल थान।।

५. अरिहंत सिद्ध समरूँ सदा, आचारज उवज्झाय।
साधु सकल के चरण कूँ, वन्दूँ शीष नमाय।।

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 5 }

६. शासन नायक सुमरिये, वर्द्धमान जिन चन्द।
अलिय विघन दूरे हरे, आपे परमानन्द।।
७. अंगुष्ठे अमृत बसे, लब्धि तणाँ भण्डार।
श्री गुरु गौतम सुमरिये, वाँछित फल दातार।।
८. श्री जिन युगपद कमल में, मुझ मन भ्रमर बसाय।
कब ऊगे वो दिन करूँ, श्री मुख दर्शन पाय।।
९. प्रणमी पद पंकज भणी, अरिगंजन अरिहन्त।
कथन करूँ अब जीव को, किंचित् मुझ विरतन्त।।

हूँ अपराधी अनादि को, जनम जनम गुनाह किया भरपूर के।
लूटीया प्राण छः काय ना, सेविया पाप अठारह क्रूर के।।
--श्री मुनि सुव्रत साहिबा०

आज दिन तक इस भव में और पहिले संख्यात, असंख्यात अनन्त भवों में कुगुरु, कुदेव और कुधर्म की सद्दहणा, प्ररूपणा, फरसना सेवनादिक सम्बन्धी पाप दोष लगा उनका मिच्छामि दुक्कडं। मैंने अज्ञानपन से, मिथ्यात्वपन से, अव्रतपन से, कषायपन से, अशुभ योग से प्रमाद करके अपछंदा अविनीतपन किया, श्री अरिहंत भगवन्त वीतराग देव, केवलज्ञानी, गणधर देव, आचार्यजी महाराज, धर्माचार्यजी महाराज, उपाध्यायजी महाराज, साधुजी महाराज, आर्याजी महाराज तथा सम्यग्दृष्टि, स्वधर्मी श्रावक और श्राविका इन उत्तम पुरुषों की तथा शास्त्र, सूत्रपाठ,

अर्थ, परमार्थ और धर्म सम्बन्धी समस्त पदार्थों की अभक्ति, अविनय, आशातना आदि की, कराई, अनुमोदी, मन, वचन, काया से, द्रव्य, क्षेत्र, काल से सम्यक् प्रकार विनय-भक्ति आराधना, पालना, फरसना, सेवनादिक यथायोग्य अनुक्रम से नहीं की, नहीं कराई, नहीं अनुमोदी तो मुझे धिक्कार धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं। मेरी भूल चूक अवगुण अपराध सब मुझे माफ करो, मैं मन वचन काया करके खमाता हूँ।

!! दोहा !!

मैं अपराधी गुरुदेव को, तीन भुवन को चोर।
ठगूँ बिराना माल मैं, हा हा कर्म कठोर।।१।।
कामी कपटी लालची, अपछन्दा अविनीत।
अविवेकी क्रोधी कठिन, महापापी 'रणजीत'[१]।।२।।
जे मैं जीव विराधिया, सेव्या पाप अठार।
नाथ! तुमारी साख से, बारम्बार धिक्कार।।३।।

पहला पाप प्राणातिपात--मैंने छः कायपन से छः काय की विराधना की, पृथ्वी-अप्-तेउ-वायु-वनस्पति काय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, सन्नी, असन्नी, गर्भज, चौदह प्रकार के सम्मूर्च्छिम आदि त्रस, स्थावर जीवों की विराधना मन वचन काया से की, कराई, अनुमोदी, उठते-बैठते, सोते-जागते, हिलते-डुलते शस्त्र-वस्त्र-

१. पाठक यहाँ अपना अपना नाम बोलें।

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 6 }

मकानादिक उपकरण उठाते, धरते, लेते–देते, वर्तते–वर्तावते, अप्पडिलेहणा दुप्पडिलेहणा सम्बन्धी, अप्रमार्जना दु:प्रमार्जना संबंधी, न्यूनाधिक विपरीत पडिलेहणा संबंधी और आहार–विहार आदि अनेक प्रकार के कर्त्तव्यों में संख्यात, असंख्यात और निगोद आदि अनन्त जीवों के जितने प्राण लूटे उन सब जीवों का मैं पापी, अपराधी हूँ, निश्चय करके बदले का देनदार हूँ, सब जीव मेरे प्रति माफ करो, मेरी भूल चूक अवगुण अपराध सब माफ करो।

देवसी, राइ, पक्खी, चउमासी और सम्वत्सरी सम्बन्धी बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं, बारम्बार मैं खमाता हूँ वे सब जीव मुझे क्षमा करें।

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झं न केणइ।।

वह दिन धन्य होगा, जिस दिन मैं छ: काय के वैर बदले से निवृत्त होऊँगा, समस्त चौरासी लाख जीव योनि को अभयदान देऊँगा, वह दिन मेरा परम कल्याण का होगा।

सुख दियाँ सुख होत है, दुःख दियाँ दु:ख होय।
आप हणे नहीं अवर कूँ, आप कूँ हणे न कोय।।

दूजा पाप मृषावाद–झूठ बोलना। क्रोध के वश, मान के वश, माया के वश, लोभ के वश, हास्य के वश, भय के वश,

मृषा (झूठ) वचन बोला, निन्दा विकथा की, कर्कश कठोर मर्मकारी वचन बोला, इत्यादि अनेक प्रकार से मृषावाद– झूठ बोला, बुलवाया और अनुमोदा, उनका मन, वचन, काया से मिच्छामि दुक्कडं।

थापनमोसा मैं किया, करी विश्वासघात।
परनारी धन चोरीया, प्रकट कह्यो नहीं जात।।

वह मुझे धिक्कार धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं। वह दिन धन्य होगा जिस दिन मैं सर्व प्रकार से मृषावाद का त्याग करूँगा, वह दिन मेरा कल्याणरूप होगा।

तीसरा पाप अदत्तादान–बिना दी हुई वस्तु चोरी करके लेना। यह बड़ी चोरी लौकिक विरुद्ध है। अल्प चोरी मकान सम्बन्धी अनेक प्रकार के कर्त्तव्यों में उपयोग सहित या बिना उपयोग से अदत्तादान, चोरी मन वचन काया से की, कराई और अनुमोदी तथा धर्म–सम्बन्धी ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप श्री भगवन्त गुरुदेव की बिना आज्ञा किया उसका मुझे धिक्कार, धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं। वह दिन मेरा धन्य होगा जिस दिन सर्व प्रकार से अदत्तादान का त्याग करूँगा वह दिन मेरा परम कल्याण का होवेगा।

चौथा पाप मैथुन सेवन करना–मैथुन सेवन करने के लिये मन, वचन और काया का योग प्रवर्ताया, नववाड़ सहित ब्रह्मचर्य नहीं पाला, नववाड़ में अशुद्धपन में प्रवृत्ति हुई, मैंने सेवन किया, दूसरों से सेवन करवाया और सेवन करने वाले

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 7 }

को अच्छा समझा, उसका मन वचन काया से मुझे धिक्कार धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं। वह दिन मेरा धन्य होगा जिस दिन मैं नववाड़ सहित ब्रह्मचर्य–शील–रत्न आराधूँगा। यानी सर्वथा प्रकार से काम विकार से निवृत्त होऊँगा वह दिन मेरा परम कल्याण का होवेगा।

पाँचवाँ परिग्रह–सचित्त परिग्रह से दास–दासी, द्विपद चतुष्पद (पशु) आदि अनेक प्रकार के और अचित्त परिग्रह सोना–चाँदी, वस्त्र, आभूषण आदि अनेक प्रकार के हैं उनकी ममता मूर्च्छा की, क्षेत्र, घर आदि नव प्रकार के बाह्य परिग्रह और चौदह प्रकार के आभ्यन्तर परिग्रह को रखा, रखवाया और अनुमोदा तथा रात्रि–भोजन अभक्ष्य आहारादि सम्बन्धी पाप दोष सेव्या होय तो उसका मुझे धिक्कार धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं। वह दिन मेरा धन्य होवेगा जिस दिन सब प्रकार से परिग्रह का त्याग कर संसार के प्रपंच से निवृत्त होऊँगा, वह दिन मेरा परम कल्याण रूप होवेगा।

छठा क्रोध–क्रोध करके अपनी आत्मा को तथा पर आत्मा को दुःखी किया।

सातवाँ मान–अहंकार भाव लाया, तीन गौरव और आठ मद आदि किया।

आठवाँ माया–धर्म–सम्बन्धी तथा संसार सम्बन्धी अनेक कर्त्तव्यों में कपट किया।

नवमाँ लोभ–मूर्च्छा भाव लाया, आशा तृष्णा वाञ्छा आदि की।

दसवाँ राग–मनपसन्द वस्तु से स्नेह किया।

ग्यारहवाँ द्वेष–अपसन्द वस्तु देखकर उस पर द्वेष किया।

बारहवाँ कलह–अप्रशस्त (खराब) वचन बोल कर क्लेश उत्पन्न किया।

तेरहवाँ अभ्याख्यान–झूठा कलंक लगाया।

चौदहवाँ पैशुन्य–दूसरे की चुगली की।

पन्द्रहवाँ परपरिवाद–दूसरे का अवगुणवाद (निन्दावाद) बोला।

सोलहवाँ रति–अरति–पाँच इन्द्रिय के २३ विषय और २४० विकार हैं, इनमें मन के पसन्द पर राग किया और अपसन्द पर द्वेष किया तथा संयम, तप आदि पर अरति की तथा आरंभादिक असंयम प्रमाद में रति भाव किया।

सतरहवाँ माया मृषावाद–कपट सहित झूठ बोला।

अठारहवाँ मिथ्यादर्शन शल्य–श्री जिनेश्वर देव के मार्ग में शंका, कंखा आदि विपरीत प्ररूपणा की। (यहाँ १८ पाप स्थानों की आलोचना विशेष विस्तार पूर्वक अपनी इच्छानुसार करनी चाहिए।)

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 8 }

इस प्रकार अठारह पापस्थान द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से, भाव से जानते, अजानते, मन, वचन और काया से सेवन किया, कराया और अनुमोदा, दिआ वा, राओ वा, एगओ वा, परिसागओ वा, सुत्ते वा, जागरमाणे वा इस भव में पहिले के संख्यात, असंख्यात, अनन्त भवों में भव–भ्रमण करते आज दिन तक[1] राग, द्वेष, विषय, कषाय, आलस, प्रमाद आदि किये। पौद्‌गलिक प्रपंच परगुण पर्याय की भूल की, ज्ञान की विराधना की, दर्शन की विराधना की, चारित्र की विराधना की, चारित्राचरित्र की, तप की विराधना की, शुद्ध श्रद्धा, शील, सन्तोष, क्षमा आदि निज स्वरूप की विराधना की, उपशम, विवेक, संवर, सामायिक, पौषध, प्रतिक्रमण, ध्यान, मौन आदि व्रत पच्चक्खाण दान, शील, तप वगैरह की विराधना की, परम कल्याणकारी इन बोलों की आराधना पालनादिक मन, वचन और काया से नहीं की, नहीं कराई और नहीं अनुमोदी। छह आवश्यक को सम्यक् प्रकार विधि उपयोग सहित आराधा नहीं, पाला नहीं, फरसा नहीं, विधि उपयोग रहित निरादरपने से किया, किन्तु आदर–सत्कार, भाव–भक्ति सहित नहीं किया। ज्ञान के चौदह, समकित के पाँच, बारह व्रतों के साठ, कर्मादान के पन्द्रह, संलेखणा के पाँच ऐसे निन्न्यानवे अतिचारों में तथा २५ मिथ्यात्व को मिलाकर १२४ अतिचारों में तथा साधुजी के १२५ अतिचारों में तथा बावन अनाचार का श्रद्धानादिक

१. यहाँ बोलने वाले वर्तमान में जो संवत् महिना और तिथि हो वह अथवा जो दिनांक, माह, वर्ष एवं समय हो वह कहें।

में विराधना आदि जो कोई अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार आदि सेवन किया, सेवन कराया, अनुमोदा जानते, अजानते, मन, वचन, काया से उनका मुझे धिक्कार धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं।

मैंने जीव को अजीव श्रद्धया, प्ररूप्या, अजीव को जीव श्रद्धया प्ररूप्या, धर्म को अधर्म और अधर्म को धर्म श्रद्धया प्ररूप्या तथा साधु को असाधु और असाधु को साधु श्रद्धया प्ररूप्या तथा उत्तम पुरुष साधु मुनिराज महासतियाँजी की सेवा–भक्ति, मान्यता आदि यथा विधि नहीं की, नहीं कराई, नहीं अनुमोदी तथा असाधुओं की सेवा–भक्ति मान्यता आदि का पक्ष किया, मुक्तिमार्ग में संसार का मार्ग यावत् पच्चीस मिथ्यात्व में किसी मिथ्यात्व का सेवन किया, सेवन कराया, अनुमोदा मन, वचन और काया से, पच्चीस कषाय सम्बन्धी, पच्चीस क्रिया सम्बन्धी, तैंतीस आशातना सम्बन्धी, ध्यान के १९ दोष, वन्दना के ३२ दोष, सामायिक के ३२ दोष, पौषध के १८ दोष सम्बन्धी मन, वचन और काया से जो कोई पाप दोष लगा, लगाया, अनुमोदा उसका मुझे धिक्कार–धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं। महामोहनीय कर्मबन्ध के तीस स्थानों को मन, वचन और काया से सेवन किया, सेवन कराया, अनुमोदा, शील की नववाड़ तथा आठ प्रवचन माता की विराधनादि, श्रावक के इक्कीस गुण और बारह व्रत की विराधनादि मन, वचन और

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 9 }

काया से की, कराई, अनुमोदी तथा तीन अशुभ लेश्या के लक्षणों की और अन्य बोलों की विराधना की चर्चा, वार्ता वगैरह में श्री जिनेश्वर देव का मार्ग लोपा, गोपा, नहीं माना, अछते की थापना की, छते की थापना नहीं की और अछते का निषेध करने का नियम नहीं किया, कलुषता की तथा छः प्रकार के ज्ञानावरणीय बन्ध, ऐसे ही छः प्रकार के दर्शनावरणीय बंध, आठ कर्म की अशुभ प्रकृति बंध, पचपन कारणों से पाप की बयासी प्रकृति बाँधी, बँधाई, अनुमोदी, मन, वचन, काया करके उनका मुझे धिक्कार धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं। एक एक बोल से लगा कर कोड़ाकोड़ी यावत् संख्याता असंख्याता अनन्ता अनन्त बोलों में से जानने योग्य बोलों को सम्यक् प्रकार जाना नहीं, श्रद्धया नहीं, प्ररूप्या नहीं, तथा विपरीतपने से श्रद्धा आदि की, कराई, अनुमोदी, मन, वचन, काया से उनका मुझे धिक्कार धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं।

एक-एक बोल से यावत् अनन्ता अनन्त बोलों में छोड़ने योग्य बोल को छोड़ा नहीं, उनको मन, वचन, काया से सेवन किया, सेवन कराया और अनुमोदा, उनका मुझे धिक्कार-धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं। एक-एक बोल से लगाकर यावत् अनन्ता अनन्त बोलों में आदरने योग्य बोलों को आदरा नहीं, आराधा नहीं, पाला नहीं, फरसा नहीं, विराधना खंडना आदि की, कराई, अनुमोदी, मन, वचन, काया से उनका मुझे

धिक्कार धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं। श्री जिन भगवन्तजी महाराज आपकी आज्ञा में जो-जो प्रमाद किया और सम्यक् प्रकार उद्यम नहीं किया, नहीं कराया, नहीं अनुमोदा मन, वचन, काया करके तथा अनाज्ञा में उद्यम किया, कराया, अनुमोदा, एक अक्षर के अनन्तवें भाग मात्र दूसरा कोई स्वप्न मात्र में भी श्री भगवन्त महाराज आपकी आज्ञा से न्यूनाधिक विपरीत प्रवृत्त हुआ होऊँ तो उनका मुझे धिक्कार धिक्कार बारम्बार मिच्छामि दुक्कडं।

१. श्रद्धा अशुद्ध प्ररूपणा, करी फरसना सोय।
अनजाने पक्षपात में, मिच्छा दुक्कडं मोय।।
२. सूत्र अर्थ जानूँ नहीं, अल्पबुद्धि अनजान।
जिनभाषित सब शास्त्र का, अर्थ पाठ परमाण।।
३. देव गुरु धर्म सूत्र कूँ, नव तत्त्वादिक जोय।
अधिका ओछा जे कह्या, मिच्छा दुक्कडं मोय।।
४. हूँ मँगसेल्यो[१] हो रह्यो, नहीं ज्ञान रस भीझ।
गुरु सेवा नहीं करी सकूँ, किम मुझ कारज सीझ।।
५. जाने देखे जे सुने, देवे सेवे मोय।
अपराधी उन सबन का, बदला देसूँ सोय।।
६. गबन करूँ बुगचा रतन, दरब भाव सब कोय।
लोकन में प्रगट करूँ, सूई पाई मोय।।

१. एक प्रकार का गोल चिकना पत्थर जो पानी से गीला नहीं होता।

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 10 }

७. जैनधर्म शुद्ध पाय के, वरते विषय कषाय।
यह अचंभा हो रह्या, जल में लागी लाय।।
८. जितनी वस्तु जगत में, नीच नीच में नीच।
सब से मैं पापी बुरो, फसूँ मोह के बीच।।
९. एक कनक अरु कामिनी, दो मोटी तलवार।
उठ्यो थो जिन भजन कूँ, बीच मैं लीयो मार।।

।। सवैया ।।

१०. मैं महापापी छाँड के संसार छार, छार ही का विहार करूँ,
अगला कुछ धोय कीच फेर कीच बीच रहूँ, विषय सुख चाहूँ,
मन्न प्रभुता बघारी है। करत फकीरी ऐसी, अमीरी की
आश करूँ, काहे कूँ धिक्कार सिर पगड़ी उतारी है।

।। दोहा ।।

११. त्याग न कर संग्रह करूँ, विषय वचन जिम आहार।
तुलसी ए मुझ पतित कूँ, बारम्बार धिक्कार।।
१२. राग द्वेष दो बीज हैं, कर्म बंध फल देत।
इनकी फाँसी में बँध्यौ, छूटूँ नहीं अचेत।।
१३. रतन बँध्यो गठड़ी विषे, भानु छिप्यो घन माँय।
सिंह पिंजरा में दियो, जोर चले कछु नाँय।।
१४. बुरा बुरा सब को कहूँ, बुरा न दीसे कोय।
जो घट शोधूँ आपणो तो, मोसूँ बुरा न कोय।।
१५. कामी, कपटी, लालची, कठिन लोह को दाम।
तुम पारस परसंग थी, सुवर्ण थासूँ स्वाम।।

१६. मैं जपहीन हूँ, तपहीन हूँ, प्रभु हीन संवर समगतं। हे दयाल!
कृपाल करुणानिधि, आयो हूँ तुम शरणागतं।
प्रभु आयो हूँ तुम शरणागतं।।
१७. नहीं विद्या नहीं वचन बल, नहीं धीरज गुण ज्ञान।
तुलसीदास गरीब की, पत राखो भगवान्।।
१८. विषय कषाय अनादि को, भरियो रोग अगाध।
वैद्यराज गुरु शरण से, पाऊँ चित्त समाध।।
१९. कहवा में आवे नहीं, अवगुण भरिया अनन्त।
लिखवा में क्यों कर लिखूँ, जाणो श्री भगवन्त।।
२०. आठ कर्म प्रबल करी, भमियो जीव अनादि।
आठ कर्म छेदन करी, पावे मुक्ति समाधि।।
२१. पथ-कुपथ कारण करी, रोग हानि वृद्धि थाय।
इम पुण्य पाप किरिया करी, सुख दु:ख जग में पाय।।
२२. बाँध्या बिन भुगते नहीं, बिन भुगत्याँ न छुटाय।
आपही करता भोगता, आपही दूर कराय।।
२३. हूँ अविवेकी मोहवश, आँख मींच अँधियार।
मकड़ी जाल बिछाय के, फसूँ आप धिक्कार।।
२४. सर्व भक्षी जिम अग्नि हूँ, तपियो विषय कषाय।
अपच्छंदा अविनीत मैं, धर्मी ठग दु:ख दाय।।
२५. कहा भयो घर छाँड़ि के, तजियो न माया संग।
नाग तजी जिम काँचली, विष नहीं तजियो अंग।।

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 11 }

२६. आलस विषय कषाय वश, आरम्भ परिग्रह काज।
योनि चौरासी लख भम्यो, अब तारो महाराज।।

२७. आतम निन्दा शुद्ध भणी, गुणवन्त वन्दन भाव।
राग द्वेष उपशम करी, सब से खमत खमाव।।

२८. पुत्र कुपुत्र मैं हुओ, अवगुण भर्‍या अनन्त।
मायड विरुद विचार के, माफ करो भगवन्त।।

२९. शासनपति वर्द्धमानजी, तुम लग मेरी दौड़।
जैसे समुद्र जहाज बिन, सूझत और न ठौर।।

३०. भव भ्रमण संसार दु:ख, ताँका वार न पार।
निर्लोभी सतगुरु बिना, कौन उतारे पार।।

३१. भव सागर संसार में, दीपा श्री जिनराज।
उद्यम करि पहुँचे तिरे, बैठी धर्म जहाज।।

३२. पतित उद्धारण नाथजी, अपनो विरुद विचार।
भूल चूक सब माहरी, खमिये बारम्बार।।

३३. माफ करो सब मायरा, आज तलक ना दोष।
दीन दयाल देवो मुझे, श्रद्धा शील सन्तोष।।

३४. देव अरिहंत गुरु निर्ग्रन्थ, संवर निर्जरा धर्म।
केवलि भाषित सासतर, यही जैन मत मर्म।।

३५. इस अपार संसार में, शरण नहीं अरु कोय।
या ते तुम पद कमल ही, भक्त सहायी होय।।

३६. छूटूँ पिछला पाप से, नवा न बाँधू कोय।
श्री गुरुदेव प्रसाद से, सफल मनोरथ होय।।

३७. आरम्भ परिग्रह तजी करी, समकित व्रत आराध।
अन्त समय आलोय के, अनशन चित्त समाध।।

३८. तीन मनोरथ ए कह्या, जे ध्यावे नित्य मन्न।
शक्ति सार वरते सही, पावे शिवसुख धन्न।।

श्री पंच परमेष्ठि भगवन्त गुरुदेव महाराजजी आपकी आज्ञा है। सम्यग्ज्ञान–दर्शन–चारित्र–तप, संयम, संवर, निर्जरा मुक्ति मार्ग यथा–शक्ति से शुद्ध उपयोग सहित आराधने पालने फरसने सेवने की आज्ञा है, बारम्बार शुभ योग सम्बन्धी सज्झाय ध्यानादिक अभिग्रह नियम पच्चक्खाणादिक करने कराने की समिति गुप्ति प्रमुख सर्व प्रकारे आज्ञा है।

१. निश्चय चित्त शुद्ध मुख पढ़त, तीन योग थिर थाय।
दुर्लभ दीसे कायरा, हलुकर्मी चित भाय।।

२. अक्षर पद हीणो अधिक, भूल चूक कही होय।
अरिहन्त सिद्ध आत्म साख से, मिच्छा दुक्कडं मोय।।
भूल चूक मिच्छामि दुक्कडं।

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 12 }

बारह भावना

१. अनित्य

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार।।

२. अशरण

दल बल देवी देवता, मात–पिता परिवार।
मरती बिरयाँ जीव को, कोई न राखन हार।।

३. संसार

दाम बिना निर्धन दुःखी, तृष्णा वश धनवान।
कहूँ न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान।।

४. एकत्व

आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यों कब हूँ या जीव को, साथी सगा नहिं कोय।।

५. अन्यत्व

जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपना कोय।
घर सम्पत्ति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय।।

६. अशुचि

दिपै चाम चादर मढ़ी, हाड़ पिंजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन गेह।।

७. आस्रव

जग वासी घूमें सदा, मोह नींद के जोर।
सब लूटे नहीं दीसता, कर्म चोर चहुँ ओर।।

८. संवर

मोह नींद जब उपशमें, सत गुरु देय जगाय।
कर्म चोर आवत रुके, तब कुछ बने उपाय।।

९. निर्जरा

ज्ञान दीप तप तैल भर, घर शोधे भ्रम छोर।
या विधि बिन निकसे नहीं, पैठे पूरब चोर।।
पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच प्रकार।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार।।

१०. लोक

चौदह राजु उत्तुंग नभ, लोक पुरुष संठान।
तामें जीव अनादि तें, भरमत है बिन ज्ञान।।

११. बोधि–दुर्लभ

तन–धन–कंचन राज सुख, सबहि सुलभ कर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक यथारथ ज्ञान।।

१२. धर्म

जाँचे सुरतरु देय सुख, चिन्तित चिन्ता रैन।
बिन जाँचे बिन चिन्तये, धर्म सदा सुख दैन।।

अनित्य अशरण संसार है, एकत्व परपंख जाण।
अशुचि आश्रव संवरा, निर्जरा लोक बखाण।।
बोधि दुर्लभ धर्म ये, बारह भावना जाण।
इनको भावे जो सदा, क्यों न लहे निर्वाण।।

D:\Prahalad\JOBS\AALOYANA.p65\Final Print\Date : 24-07-2012 { 13 }

बृहद् आलोयणा

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
के विविध सेवा सोपान

जिनवाणी हिन्दी मासिक पत्रिका का प्रकाशन

जैन इतिहास, आगम एवं अन्य सत्साहित्य का प्रकाशन

श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान का संचालन

उक्त प्रवृत्तियों में दानी एवं प्रबुद्ध चिन्तकों के रचनात्मक सक्रिय सहयोग की अपेक्षा है।

सम्पर्क सूत्र

मंत्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

दुकान नं. 182-183 के ऊपर, बापू बाजार

जयपुर-302003 (राजस्थान)

दूरभाष : 0141-2575997 फैक्स : 0141-2570753